DEN NEWS

(Desert Environment News)

केन्द्रीय रुक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान

Vol. 2 | No.1- 2 | March-June, 1998

सम्पादकीय

हिन्दी में 'मरुस्थलीय पर्यावरण सूचना केन्द्र' द्वारा प्रकाशित यह 'सूचना पत्र' आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष एवं गौरव का अनुभव हो रहा है। साथ ही भारत वर्ष में मनाये जाने वाले 'हिन्दी सप्ताह' (14-21 सितम्बर 98) में इसे आपके समक्ष प्रस्तुत नहीं कर सकनें हेतु खेद भी अनुभव करता हूँ।

मरुभूमि मात्र बंजर, रेतीली, शुष्क, जल एवं वनस्पति रहित भूमि ही नहीं है अपितु अपने गौरवमय इतिहास, प्राकृतिक एवं जैविक विविधता, कला एवं संस्कृति के विपुल भण्डार के फलस्परूप देशी-विदेशी पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करने में सक्षम है। प्रतिवर्ष जैसलमेर में मनाये जाने वाले 'डेजर्ट फेयर' ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त करली है। स्वतंत्रता के पश्चात केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने इस क्षेत्र के विकास में विशेष रुचि दिखाई। इसी कड़ी में इस क्षेत्र के चहुँमुखी विकास हेतु जोधपुर में 'केन्द्रीय रुक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान' की स्थापना की। इस संस्थान ने पाँच दशकों में किये गये शोध कार्यो से जहाँ मरुस्थल के फैलाव व टीबों के स्थरीकरण में सफलता प्राप्त की है वहीं कृषि एवं प्रसार की विभिन्न तकनीकियों द्वारा मरुभूमि में हरित क्रान्ति लाने में सहयोग प्रदान कर अकाल एवं सूखे की विषमता में कमी लाने का प्रयास किया है। भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण विभाग द्वारा इस संस्थान में 'एनविस केन्द्र' की स्थापना कर मरुस्थलीय सूचनातंत्र को प्रभावी बनाने का प्रयास किया है।

प्रस्तुत अंक में सम्मिलि दोनों लेखों में जहां मरु पर्यावरण की सुन्दरता व आलौकिकता का वर्णन किया है वही आधुनिकता की होड़ में वनों के विनाश एवं जैविक विविधता के ह्रास की ओर भी ध्यान आकर्षित किया गया है।

आशा है राष्ट्रभाषा को समर्पित यह अंक आपको पसन्द आएगा। आपकी सम्मति एवं सुझावों से अवगत कराने का श्रम करें।

डॉ. दिनेश चन्द्र ओझा
सम्पादक

सन्देश

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि संस्थान में स्थापित 'एनविस डेजर्टीफिकेशन केन्द्र' द्वारा 'डेन न्यूज' का यह अंक हिन्दी में प्रकाशित किया जा रहा है। भारत सरकार के वन एवं पर्यावरण विभाग द्वारा स्थापित इस केन्द्र ने 'मरूस्थलीयकरण' के क्षेत्र में विभिन्न डाटाबेस के निर्माण एवं सूचना सेवाओं के कारण कृषि वैज्ञानिकों एवं शोध छात्रों में अच्छी ख्याति अर्जित कर ली है। हिन्दी में प्रकाशित इस अंक में सम्मिलित किये जाने वाले दोनों लेख मरूस्थलीय पर्यावरण के बारे में ऐतिहासिक व वैज्ञानिक जानकारी प्रदान करते हैं, वहीं आधुनिकता की दौड़ के फलस्वरूप अंधा-धुंध वनों की कटाई व इन्दिरा गाँधी नहर के फलस्वरूप जैविक विविधता के ह्रास की ओर भी ध्यान आकर्षित करते हैं।

स्वतंत्रता के पच्चासवें वर्ष में हिन्दी के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से यह अंक भारत की धरती के कोने-कोने में फैले सरकारी संस्थानों में राजभाषा रूपी अंकुर को पल्लवित करने में अत्यन्त उपयोगी साबित होगा।

इस अंक में सम्मिलित कलेवर एवं इसके सफल प्रकाशन हेतु हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ।

– डॉ. अमरसिंह फरोदा
निदेशक

अखिल भारतीय पर्यावरणीय पोस्टर प्रतियोगिता 1998-99

पर्यावरण विभाग, राजस्थान सरकार द्वारा राजस्थान राज्य प्रदूषण नियंत्रण मंडल, जयपुर के सहयोग से निम्नलिखित विषयों पर एक अखिल भारतीय पर्यावरणीय पोस्टर प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है।

विषय: (1) सक्षरण कैसे रुके (2) हमारे प्रदूषित होते जल स्त्रोत (3) हम और हमारे वाहन (4) खतरनाक रसायन और खतरे (5) पेड़ पौधे और जीवन (6) वन्य जीवन कैसे बचे (7) कपड़ा सीमेन्ट उद्योगों से हो रहा प्रदूषण (8) शोर या संगीत (9) ओजोन परत का क्षरण (10) महिलाएं, बच्चे और पर्यावरण।

पुरस्कार: प्रत्येक विषय में सर्वश्रेष्ठ एक पोस्टर को रुपये दस हजार का पुरस्कार। विशेष उल्लेखनीय कृतियों पर ढाई-ढाई हजार रुपये के करीब दस पुरस्कार।

अंतिम तिथि: 28 फरवरी, 1999

साइज: 20''×30'' के ही पोस्टर्स स्वीकार किए जाएंगे।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें:-

सदस्य सचिव, राजस्थान राज्य प्रदूषण नियंत्रण मण्डल, 4, इंस्टीट्यूशनल एरिया, झालाना डूंगरी, जयपुर-302004 से (निःशुल्क) प्राप्त किया जा सकता है।

मरुस्थलीय वनस्पतियां नष्ट होने लगी

रावतसर व सूरतगढ़ तहसीलों में 'वाटर लोगिंग' की समस्या का सर्वे

केन्द्रीय रुक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान 'काजरी' ने इंदिरा गांधी नहर से पानी के रिसाव तथा लगातार सिंचाई के कारण पैदा हुई 'वाटर लोगिंग' (जलग्रस्तता) की समस्या का गंगानगर व हनुमानगढ़ जिलों की दो तहसीलों में सर्वे पूरा कर लिया है। वाटर लोगिंग जिसे सेम की समस्या भी कहा जाता है, के कारण इन जिलों में हजारों हेक्टेयर भूमि बेकार होने के साथ ही कई जगह दल-दल जैसे हालात पैदा हो गए हैं। खेतों में पानी जमा रहने के अलावा मिट्टी में लवणीयता बढ़ गई है। जिन दो तहसीलों में सर्वे पूरा हो गया है वहां पाया गया कि वाटर लोगिंग के कारण मरुस्थलीय वनस्पतियां नष्ट हो रही हैं। इतना ही नहीं मिट्टी के साथ साथ पेयजल में भी क्षारीयता व लवणीयता बढ़ने लगी है।

काजरी के सूत्रों ने बताया कि इन दोनों जिले में 'वाटर लोगिंग' की समस्या की गंभीरता, प्रभावित इलाके का पता लगाने तथा समस्या के निराकरण को उपाय सुझाने के लिए काजरी ने प्रारंभिक सर्वेक्षण के बाद गहन सर्वे करने का निर्णय किया था। काजरी के प्राकृतिक संसाधन एवं प्रबोधन प्रभाग ने दो साल पहले यह सर्वे शुरु किया। हनुमानगढ़ जिले की रावतसर तहसील तथा गंगानगर जिले की सूरतगढ़ तहसील में सर्वे पूरा कर लिया गया है जबकि वर्तमान में पांच अन्त तहसीलों में सर्वे चल रहा है। भू-आकारिकी, मृदा, जल, वनस्पति, भू-गर्भ शास्त्र, भू-उपयोग आदि विषयों के काजरी के वैज्ञानिक इस सर्वे में जुड़े हुए हैं। आगामी तीन वर्ष में दोनों जिलों की सभी तहसीलों में यह सर्वे पूरा हो जाने की उम्मीद है।

सूत्रों ने बताया कि इंदिरा गांधी नहर के पहले इन तहसीलों में सूखा व रेतीला इलाका था। अब पानी आने से हरियाली तो भरपूर हो गई लेकिन जगह जगह सतह पर भी पानी जमा हो गया है। सर्वे में पाया गया कि इसकी वजह से खेजड़ी, रोहिड़ा, बोर तथा केर जैसी महत्वपूर्ण मरुस्थलीय वनस्पतियां समाप्त होती जा रही है। इतना ही नहीं नहर के आस पास लगे सफेदा के बड़े-बड़े पेड़ों की जड़ों में पानी जमा हो जाने से वे भी मर रहे हैं। इनकी जगह अनुपयोगी पेड़ा 'झाऊ'

तथा मूंज घास अपने आप पैदा हो गई है। इसके अलावा भी पानी में उगने वाली अन्य घासें पनप रही हैं जो बेकार हैं।

सर्वे में पाया गया कि 'वाटर लोगिंग' के कारण खेतों की मिट्टी में क्षारीयता व लवणीयता बढ़ गई है तथा इन दोनों तहसीलों की हजारों बीघा काबिल काश्त भूमि बेकार हो गई है। कई जगह तो यह समस्या इतनी विकराल रूप ले चुकी है कि अब वहां फसल लेना संभव नहीं है। सतही जल स्रोतों में भी लवणीयता की समस्या बढ़ती जा रही है। उल्लेखनीय है कि नहरी क्षेत्र के उन इलाकों में 'वाटर लोगिंग' की समस्या पैदा होती है जहां खेती योग्य भूमि के नीचे खनिजों की ऐसी परतें पाई जाती हैं जिसमें से होकर पानी नहीं गुजर सकता। ये परतें 'इमपर-मिएबल मैम्बरेन' का काम करती है। ऐसी स्थिति में हर वर्ष सिंचाई करने से पूरा पानी भू-गर्भ में नहीं जा पाता और न ही वाष्पीकरण से पूरा सूख पाता है। इस प्रकार थोड़ा बहुत पानी हमेशा मिट्टी के नीचे जमा रहता है। कई वर्षों बाद ऐसे हालात पैदा हो जाते हैं कि जमीन में से फूट कर पानी बाहर निकलने लग जाता है और वह खेतों में जमा होता रहता है।

राजस्थान व गुजरात में
जंगली बिल्ली, चिंकारा और चिड़ियों का स्टेटस सर्वे

तेजी से बदलती जा रही परिस्थितिकी और भौगोलिक स्थितियों में रेगिस्तानी जंगली बिल्ली, चिंकारा और चिड़ियों की राजस्थान एवं गुजरात राज्यों में वास्तविक स्थिति का पता चलाने का काम तेजी से चल रहा है।

प्राणि सर्वेक्षण विभाग, जोधपुर के दो वैज्ञानिक इन क्षेत्रों में इन वन्य जीवों का स्टेटस सर्वे कर रहे हैं। डॉ. पी.एल.कनकने और डॉ.संजीव कुमार इस तीन साला परियोजना के तहत स्थल सर्वेक्षण कर रहे हैं। सर्वे का यह कार्य सन् 2000 तक पूरा हो जाएगा। डॉ.कनकने राजस्थान में जंगली बिल्ली और चिंकारा के स्टेटस सर्वे का काम पूरा करने के बाद गुजरात के कुछ क्षेत्रों का भी सर्वेक्षण कर चुके हैं। डॉ.संजीव कुमार चिड़ियों की वास्तविक स्थिति का पता लगाने एक दो दिन में नल सरोवर (गुजरात) क्षेत्र में जा रहे है। रेगिस्तान में इंदिरा गांधी नहर आ जाने के बाद जो पारिस्थितिक परिवर्तन हुए हैं उसने जैव विविधता पर काफी असर डाला है। अब ऐसी प्रजाति की चिड़ियां भी यहाँ दिखाई देने लगी हैं, जो नहर आने से पहले कभी नहीं देखी गई। पानी के कारण विभिन्न तरह की वनस्पति उग आने से भी जहां शुष्क इलाकों की अभ्यस्त जीव-जंतु गायब हो गए हैं, वहीं नए किस्म के जीव भी पैदा हो गए हैं। पूर्व में यहां चिड़ियों की लगभग 186 प्रजातियां थीं। अब उनमें से अनेक लुप्त होती जा रही तो कुछ नई प्रजाति की चिड़ियां भी प्रवेश कर चुकी है। एक मोटे अनुमान के अनुसार अब तीन सौ किस्म की चिड़ियाएं इस इलाके में हैं।

सन् 1997-98 में शुरु किये गये इस सर्वेक्षण कार्य को 2000 तक पूरा कर इन जीवों पर विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित की जाएगी। सर्वेक्षण के दौरान इस बात का पता लगाया जा रहा है कि राजस्थान और गुजरात के किन-किन क्षेत्रों में ये जीव-जंतु उपलब्ध हैं। इसके अलावा यह बात भी चिन्हित की जाएगी कि रेगिस्तानी बिल्ली, चिंकारा और चिड़ियों की प्रजातियों का घनत्व क्या है तथा ये किन हालात में रह रहे हैं।

हिन्दी की होड़ किसी प्रांतीय भाषा से नहीं, केवल अंगेजी के साथ है।
– डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

भारतीय मरुस्थल की विस्मयपूर्ण जैविक विविधता

डॉ.ईश्वर प्रकाश
मरु प्रादेशिक शाखा
भारतीय प्राणी सर्वेक्षण विभाग, जोधपुर

मनुष्य के मानस पटल पर रेगिस्तान का नाम आते ही वृहत रेत के मैदान, वनस्पतिहीन मिट्टी के टीले एवं ऊँटों के कारवाँ दृष्टिगोचर होने लगते हैं। किन्तु भारत के थार रुक्षक्षेत्र में बदलते मौसमों में विहंगम दृष्टावली मन मोहक रंगों से भरी होती है। विकट ग्रीष्म ऋतु में जहाँ सूखा ही सूखा दिखता है तो वर्षा की पहली बौछार के पश्चात् विस्तृत रेतीले मैदान एवं टीबे हरियाली में परिवर्तित हो जाते हैं। रुक्ष क्षेत्र में वर्षा एक अमूल्य एवं अद्भुत वरदान है जिससे वनस्पति एवं प्राणियों में नये जीवन का संचार हो जाता है। इसका कारण बालू पर जल की बूंदों से उत्पन्न वातावरण को सुगन्धित करने वाली गन्ध है अथवा वर्षापात की मधुर ध्वनि, यह अभी भी वैज्ञानिकों की समझ से परे है अथवा वर्षा जल में कोई उर्वरक है जो सुषुप्त जीव जन्तुओं को नव जीवन प्रदान कर देता है। समस्त दिशाओं में बीजों का अंकुरण हो जाता है।

थार रुक्ष क्षेत्र को मरुस्थल (मरा हुआ प्रदेश) कहना अति भ्रामक व मिथ्याबोध है। यहाँ की जैविकी का विकास रेगिस्तानी पर्यावरण के अनुकूल हुआ है तथा उतना ही प्रचुर है जैसा और किसी प्राकृतवास में पाया जाता है। रेगिस्तान में पाये जाने वाले पेड़-पौधे, जीव जन्तु ग्रीष्म काल की अत्यधिक उष्णता, शीत ऋतु के न्यूनतम तापमान तथा जल विहीन वातावरण में ही विकसित हुए हैं। इनका आकार, व्यवहार, बनावट प्राकृतिक संसाधनों की न्यूनता के अनुकूल हो गया है।

भारत में मूलत: दो प्रकार के मरुस्थल उष्ण व शीत उपलब्ध हैं। शीत मरुस्थल जहाँ लद्दाख में स्थित है, वहीं उष्ण दक्षिणी पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी राजस्थान तथा उत्तरी गुजरात में फैला हुआ है जिसको थार के नाम से भी जाना जाता है। थार का 62 प्रतिशत भाग राजस्थान में है। यह संसार के सारे रेगिस्तानों की अपेक्षा एक अनन्य प्राकृतवास है क्योंकि यहाँ कोई मरुद्यान (Oasis), कोई स्थानिक (endemic) कैक्टस नहीं पाया जाता।

स्वतन्त्रता से पूर्व थार ही नहीं अपितु सारा राजस्थान देशी राज्यों में विभाजित था जैसे बीकानेर स्वतंत्रता के डेढ़ शताब्दी पूर्व अंग्रेज प्रशासकों द्वारा किये गये सर्वेक्षणों एवं लेखों से यह रहस्योद्घाटन होता है कि दक्षिणी-पूर्व थार में बब्बर शेर (Asiatic Lion) पाये जाते थे। बीकानेर तथा जैसलमेर के निकट रेतीले टीबों पर जंगली गधों (Wild Ass) के झुन्ड रहते थे। जयपुर के पार धारीदार शेर (Bengal Tiger) पर्याप्त संख्या में मिलते थे। वर्तमान में ये प्रजातियां रुक्ष क्षेत्र में अब लुप्त हो चुकी हैं। बब्बर शेर गुजरात के सासनगीर वनखण्ड में तथा जंगली गधा कच्छ के लघु रण में ही सीमित रह गये हैं। हमारे वयोवृद्ध बताते हैं। कि 1925 तक जोधपुर नगर के समीप की पहाड़ियों पर जंगली सूअर (Wild Boar) प्रचुर संख्या में रहते थे। रात्रि को यह नगर की गलियों में विचरने आ जाते थे और नगरवासियों का सँध्या के पश्चात् घरों से निकलना बन्द हो जाता था। इन पहाड़ियों पर बघेरे (Panther) एवं माँसाहारी स्तनियों की अनेक प्रजातियाँ पाई जाती थीं। वर्तमान में थार मरुस्थल में जंगली सूअर लगभग लुप्त हो चुके हैं। यही स्थिति कैराकेल, जंगली बिल्ली, रेगिस्तानी लौमुशी, भेड़िया, सियार आदि की भी है। 1950 के दशक में मैंने एक ही दिवस में 12-15 मरुस्थलीय लौमड़ियां शिव गाँव के निकट व पोकरण-जैसलमेर के सेवन घास के मैदानों में 200 से 800 भारतीय गेज़ेल देखे हैं। किन्तु आज 20 गेजल का समूह निडर विचरते दिख जाये तो हम अपने आप को भाग्यशाली समझते हैं।

थार क्षेत्र आवासी तथा प्रवासी पक्षियों के लिए विख्यात था। गोडावन (ग्रेट इन्डियन बस्टर्ड) भी पर्याप्त संख्या में दिखते थे। थार में इनके अण्डे देने की सूचना तो मैंने ही प्रथम बार दी थी। यह बड़ा पक्षी अब "मरु राष्ट्रीय उद्यान" में ही दृष्टिगोचर होता है। पूर्व में प्रत्येक झाड़ी के पीछे तीतर बटेरों के झुण्ड दिखते थे। सन् 1954 में बिंजोराई (जैसलमेर) के निकट जब मैं बाटबड़ों (कॉमन सैन्ड्ग्राउज़) का पानी पीन आने की प्रतीक्षा कर रहा था, अचानक आकाश में अंधेरा सा छा गया। लगभग दस सहस्र सैन्ड्ग्राउज़ का झुन्ड गगन में उड़ता दिखाई दे रहा था। इन पक्षियों के समूह का आकार इतना बड़ा था कि सूर्य देवता की किरणें पृथ्वी तक पहुंच नहीं पा रही थी। इनका 'कै कै' करता कलरव स्वर बड़ा हृदयग्राही प्रतीत हुआ। अब इन की संख्या 100-150 पक्षी प्रति झुन्ड ही रह गई है। शीत ऋतु में, नवम्बर माह के मध्य से तिलोर पक्षी (हुबारा) और इम्पीरियल सैन्ड्ग्राउज़ रुक्षक्षेत्र में आना प्रारम्भ कर देते हैं। वर्तमान में इसकी संख्या न्यूनतम हो गई है।

थारीय मरुस्थल में इन विषमताओं के अतिरिक्त एक बड़ी बाधा है जैविकी के लिये निरन्तर घटता आश्रय। जनसँख्या में पिछले 50 वर्षों में 3 करोड़ से 18 करोड़ की बढ़ोतरी ने रेगिस्तान की पारिस्थिकी में बदलाव कर दिया। घास के मैदान, झाड़ी युक्त वृहत क्षेत्र समाप्त कर दिये गये। समस्त स्थानों पर हल चल गये, खेती होने लगी। मरुस्थलीय वनस्पति एवं जीव जन्तुओं के आवास नष्ट होने के परिणाम स्वरूप जैविक विविधता का ह्रास हो गया। मनुष्य की आबादी के साथ पशुधन की सँख्या में भी वृद्धि हुई। आज थार रुक्षक्षेत्र में 23 करोड़ पशु चर रहे हैं। फलस्वरूप चारे योग्य वनस्पति नष्ट हो चुकी है। वर्षा के पश्चात् जो हरियाली दिखती है वह उन प्रजातियों की है जो न तो पौष्टिक हैं न ही पशुओं को स्वस्थ रखने के योग्य।

इस निराशापूर्ण शंका का मुख्य कारण है इन्दिरा गांधी नहर द्वारा रेगिस्तान में पानी का अवतरण। श्रीगंगानगर, सूरतगढ़ से लेकर जैसलमेर, रामगढ़ तक सिंचित खेती होने लगी। इस क्षेत्र में सेवन (लेसीयूरस सिंडिकस) के विशाल चारागाह लुप्त होते जा रहे हैं। इनमें रहने वाले विशेष सर्प, छिपकलियाँ, कैराकेल, मरुस्थलीय बिल्ली, विभिन्न प्रकार के पक्षी, कीड़े-मकौड़े जो सूखी भूमि में रहने के अनुकूल थे वह मृदा की नमी के कारण इन आवासों को छोड़ रहे हैं अथवा लुप्त हो रहे हैं। इन प्रजातियों का स्थान ऐसी वनस्पति एवं जीव जन्तु ले रहे हैं जो समस्त भारत में मिलते हैं। उदाहरणार्थ जल के समीप रहने वाले पक्षी, मृदा में नमी के अनुकूलिक कृन्तक आदि। इस प्राकृतिक रेगिस्तानी प्राकृतवास की पारिस्थिकी के बदलाव के कारण स्थानिक जैविकी की उत्तरजीविता का परिप्रश्न खड़ा हो गया है।

रेगिस्तानी जैविकी विविधता को सुरक्षित रखने के लिए एवं उनके संरक्षण के लिए शीघ्र संभाव्य योजनाएं बनानी चाहिए। पश्चिमी राजस्थान में जिन भागों में सिंचाई नहीं हो पाएगी वहाँ छोटे बड़े राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण्य की तुरन्त स्थापना की जानी चाहिए। रेगिस्तान के वातावरण में पाये जाने वाले विशिष्ट, स्थानिक जीव भारतवर्ष में और कहीं नहीं पाये जाते, उनका रुक्षक्षेत्र में ही संरक्षण करना अतिआवश्यक है। मनुष्य रुक्षक्षेत्र का एक "भावी भूमि बैंक" के रूप में सदा शोषण नहीं कर सकता। रेगिस्तान में पारिस्थितिक गतिरोध करने की शक्ति है। इसके विप्रकष्ट परिणाम होंगे। हमें समयानुकूल इनके प्रति जागरुक एवं सावधान रहना होगा।

वृक्ष लगाओ, हरियाली लाओ
पर्यावरण को स्वस्थ बनाओ।

थार मरुस्थलीय पर्यावरण

-डॉ. दिनेश चन्द्र ओझा
प्रमुख अन्वेषक (एनविस) एवं पुस्तकालय प्रभारी
केन्द्रीय रुक्ष क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

भारत के पश्चिम में स्थित 'मरु' प्रदेश की भौगोलिक स्थिति का ज्ञान हमें प्राचीन साहित्य से होता है। वैदिक साहित्य में भी 'मरु' शब्द का उल्लेख मिलता है और उसमें वर्णित लक्षणों से इसी प्रदेश का बोध होता है। वेदों में मरुतों की एक आख्यायिका के अनुसार मरुतों को अपना मूल निवास सरस्वती प्रदेश त्यागकर राजस्थान के इस पश्चिम भाग में आकर निवास करने लगे और मरुतों के कारण ही यह प्रदेश मरुत प्रदेश के नाम से विख्यात हुआ व कालान्तर में 'त' का लोप होकर यह मरुप्रदेश कहलाने लगा। वैदिक साहित्य के अतिरिक्त हिन्दुओं के दो महाकाव्यों 'रामायण' व 'महाभारत' में भी इस प्रदेश का उल्लेख मिलता है। रामायण में उल्लेख मिलता है कि लंका पर चढ़ाई के पूर्व श्री राम ने समुद्र से रास्ता देने की प्रार्थना की थी। अनुनय विनय के उपरान्त भी जब समुद्र ने मार्ग नहीं दिया तो राम ने क्रुद्ध होकर समुद्र सोंखने के लिये बाण चढ़ाया। भगवान श्री राम के आक्रोश से घबरा कर समुद्र के अधिष्ठाता देवता ने स्वयं प्रकट होकर सेतु निर्माण की विधि बताई, परन्तु श्री राम के यह कहने पर की मेरा यह अस्त्र अमोध है, समुद्र ने इसे उत्तर दिशा की ओर गिराने का सुझाव दिया। वह वज्र के समान प्रदीप्त बाण जहां गिरा, वह स्थान उसी दिन से 'मरु-प्रदेश' के नाम से विख्यात हो गया। रामायण में इस प्रदेश की उत्पत्ति के साथ-साथ यह भी बताया गया है कि यह क्षेत्र पशुओं के लिए हितकारक, रोगरहित, फलमूलों और शहद से युक्त होगा। इसमें घी-दूध की बहुतायत होगी और विविध प्रकार की औषधियां होगी। विद्वानों का मत है कि पाण्डुओं ने अपने वन प्रवास का तेरहवां वर्ष यहां के राजा विराट के राज्य में गुप्त भेष में बिताया। जयपुर के उत्तरीय भाग में स्थित उस समय के खाण्डव वन को पाण्डवों ने ही साफ करके अपने रहने के अनुकूल बनाया जो कि कालान्तर में वहां के राजा विराट के नाम पर विराटपुर (वर्तमान बैराठ) से प्रसिद्ध हुआ। ऐसा माना जाता है कि कीचक का वध व उत्तरा-अभिमन्यु की शादी भी इसी क्षेत्र में हुई। ऐसे भी उल्लेख प्राप्त होते हैं कि वनवास के तेरहवें वर्ष में पाण्डवों ने गुप्त रूप से पुष्कर में भी निवास किया था। महाभारत के युद्ध में कौरवों की तरफ से यहां के उलूक प्रदेश (अलवर) के राजा उलूक ने भाग लिया था।

प्रागैतिहासिक काल के इन तथ्यों को अनेकों पुरातात्विक विज्ञों जिनमें डॉ.हंसमुखलाल धीरजलाल. सांखलिया, डॉ.बी.एन.मिश्रा, डॉ.लेशनिक, ए.घोष आदि प्रमुख हैं, ने भी सही माना है। डॉ.वी.एन.मिश्रा ने लूनी नदी को प्रागैतिहासिक नदी प्रमाणित करते हुए इसके पास आदि मानव सभ्यता के अस्तित्व को स्वीकार किया है। डॉ.विमल घोष, अमलकार एवं जहीद हुसैन ने जैसलमेर जिले में सरस्वती नदी होने के पुख्ता प्रमाण प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने विभिन्न भूगर्भ सर्वेक्षणों के आधार पर उन स्थानों को भी चिन्हित किया है जहां से होकर पश्चिमी राजस्थान से सरस्वती नदी निकलती थी। इसी प्रकार बीकानेर मण्डल में काली बंगा स्थान पर हमें हड़प्पा से पूर्व की सभ्यता के अवशेष प्राप्त होते हैं।

कालान्तर में इस मरुभूमि के सम्बन्ध में हमें ठीक इसके विपरीत उल्लेख मिलते हैं। अमरकोश में 'मरु' का अर्थ मरना व रेगिस्तान बताया गया है। इसकी व्याख्या में बताया गया है कि जहां यात्री जल के अभाव में मर जाते हैं उसे मरुभूमि कहते हैं। हुमायु नामा में वर्णित व्याख्या से उपरोक्त तथ्यों की पुष्टि होती है।

इन अन्तर्विरोधी तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह प्रदेश आदिकाल से रेगिस्तान नहीं था। रामायण में उपलब्ध साक्ष्यों से यह स्पष्ट होता है कि यह प्रदेश पूर्व में समुद्र था जो कि कालान्तर में सूख जाने पर मरु बन गया। इस क्षेत्र में समुद्र होने के अनेकों अन्य प्रमाण भी उपलब्ध है:

(1) जोधपुर के दक्षिण पश्चिम में स्थित पचपद्रा नामक स्थान पर नमक का जलाशय उपलब्ध होना।

(2) फलोदी के मध्य में नमक कूप का होना।

(3) फुलेरा व आसपास के क्षेत्रों में नमक की झील का होना।

(4) जोधपुर के पास बिलाड़ा में 'बाणगंगा' का उपलब्ध होना।

(5) मरुक्षेत्र में खुदाई करने पर शंखों व सीपों का प्राप्त होना।

थार मरुस्थलीकरण

देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 12 प्रतिशत भाग शुष्क क्षेत्र है व इस कुल 12 प्रतिशत का 61 प्रतिशत भाग राजस्थान में है। एक संभावित अनुमान के अनुसार इस क्षेत्र (राजस्थान) का तीन चौथाई भाग जो कि लगभग 196150 वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है, शुष्क क्षेत्र है, जिसे मरुस्थल अथवा थार रेगिस्तान के नाम से जानते हैं। इसमें पश्चिमी राजस्थान के 11 जिलों (बीकानेर, चूरु, श्रीगंगानगर, बाड़मेर, जैसलमेर, झुन्झुनू, जोधपुर, नागौर, पाली व सीकर) को सम्मिलित किया जा सकता है। इस क्षेत्र में ग्रीष्म ऋतु में धूलभरी आँधियाँ चलती हैं व फलस्वरूप रेत के टीबे स्थानान्तरित होते रहते हैं। ग्रीष्म ऋतु में इस क्षेत्र में अनेकों स्थानों पर पारा 49 डिग्री तक पहुँच जाता है। राजस्थान के कुल क्षेत्र का 61-63 प्रतिशत बालू रेत से ढका रहता है। इसका अत्यधिक प्रभाव जैसलमेर, बाड़मेर व बीकानेर में देखने को मिलता है।

मरुस्थल का शाब्दिक अर्थ है भूमि का वह भाग जो मृत है, जहां किसी भी प्रकार की कोई वनस्पति पैदा नहीं हो सकती अर्थात् उस क्षेत्र विशेष में भूगर्भीय जल का अभाव हो, जहां मिट्टी में जैविक तत्वों की कमी हो, भूमि बंजर हो, जहां मिट्टी की उर्वरकता समाप्त हो चुकी हो। जलवायु की दृष्टि से जहां औसत वर्षा 250 मि.मी. से कम होती हो व ग्रीष्म ऋतु में जहां का तापमान 40 डिग्री से उपर रहता हो। परन्तु फिर भी भारत का थार रेगिस्तान 'सहारा' से सर्वथा भिन्न है। हमारे यहां रेगिस्तान में जन-जीवन, पशुधन व कृषि भी होती है।

जन-जीवन

किसी भी स्थान पर निवास करने वाली आबादी का घनत्व वहां की भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। यदि हम 'थार' जनसंख्या के घनत्व का देश के अन्य राज्यों से तुलना करें तो विदित होगा कि यहां का घनत्व अत्यन्त न्यून है। केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (काजरी), जोधपुर ने अनेक सामाजिक एवं आर्थिक सर्वेक्षणों के द्वारा उन कारणों का पता लगाने का प्रयास किया है जो इस क्षेत्र में आबादी के घनत्व को प्रभावित करते हैं। भौगोलिक दृष्टि से इस क्षेत्र का आधे से अधिक भाग रेतीले टीबों से ढका हुआ है व फलत: जीवन निर्वाह के साधनों की अत्यधिक न्यूनता है। राजनैतिक दृष्टि से देश का यह भू-भाग स्वतंत्रता एवं आधुनिक राजस्थान के निर्माण के पूर्व छोटी-छोटी रियासतों में बंटा हुआ था जिससे इन छोटी रियासतों की राजनैतिक आत्मनिर्भरता इनके आर्थिक विकास के लिए अभिशाप बन गई। इस भू-भाग के एक हिस्से को अनिवार्यत: दूसरे हिस्से में उपलब्ध विकास के साधनों से वंचित रहना पड़ा। ऐतिहासिक दृष्टि से हमलावरों एवं रियासतों के राजाओं के पारस्परिक झगड़ों के कारण यहां कोई आर्थिक स्थिरता न रह सकी जिससे न कृषि का विकास हो सका और न ही औद्योगीकरण ही। थार में जनसंख्या की सघनता पश्चिम से पूर्व की ओर व दक्षिण पश्चिम से पूर्व की ओर बढ़ती है। प्रदेश के सबसे सूखे भाग जैसलमेर में आबादी की सघनता सबसे न्यून (9 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर) है व औसत वर्षा 100 मिमी. से कम है। जहां प्रदेश की जनसंख्या का औसत घनत्व 128 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. है वहीं सर्वाधिक जनसंख्या (335 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर) जयपुर व दौसा में है। यद्यपि जैसलमेर, बीकानेर व बाड़मेर में प्रति वर्ग किलोमीटर घनत्व बहुत कम है (9,44,50) तथापि यह विश्व के अन्य मरुस्थलों की तुलना में बहुत

अधिक है। वर्तमान में राजस्थान राज्य में एक हजार पुरुषों के पीछे 911 स्त्रियां हैं जबकि 1981 की जनगणना के अनुसार यह अनुपात 919 था। श्री गंगानगर, बीकानेर, अलवर, भरतपुर, धौलपुर, सवाईमाधोपुर, जयपुर, जैसलमेर, बाड़मेर, बूंदी और कोटा जिलों में 1000 पुरुषों के पीछे 900 से भी कम स्त्रियां हैं।

देश के इस भाग में कार्यशील जनसंख्या का ढाँचा भी भिन्न-भिन्न है। क्षेत्र में मुख्य काम करने वाले लोगों का प्रतिशत कुल जनसंख्या का 31.62 प्रतिशत है। इसमें सर्वाधिक 41.45 तथा 40.39 प्रतिशत क्रमशः चित्तौड़गढ़ व भीलवाड़ा जिलों का है तो वहीं काम न करने वालों का सर्वाधिक प्रतिशत 70.42 व 65.35 क्रमशः धौलपुर व सीकर जिलों का है। कृषि यहां के लोगों का मुख्य व्यवसाय (71.6) है वहीं उद्योग क्षेत्र में लगे लोगों व सरकारी सेवा क्षेत्र में लगे लोगों का प्रतिशत क्रमशः 13 व 16 है। आँकड़े स्पष्ट करते हैं कि उद्योग व सेवा क्षेत्र में लगे लोगों का अनुपात कुल कार्यशील जनसंख्या के एक तिहाई से भी कम है साथ ही इससे यह भी विदित होता है कि कार्यशील जनसंख्या के असंतुलित अनुपात ने क्षेत्र के औद्योगिक विकास को प्रभावित किया है।

मिट्टियां

सम्पूर्ण प्रदेश का क्षेत्र विशेषकर थार मरुस्थल का पश्चिमी भाग बालूका क्षेत्र है। यहां की अधिकांश मिट्टी या तो ढलान में आई हुई है या ऊँचे-ऊँचे टीबों के आकार में है जहां बीच बीच में गढ्ढे बन गये हैं। मरुस्थल की मिट्टी पर यहां की जलवायु, नदियों, अरावली श्रृंखलाओं व वनस्पति का प्रभाव देखा जा सकता है। राजस्थान में अरावली के पश्चिम का अधिकांश भाग शुष्क अथवा अर्द्धशुष्क है। यहां का अधिकांश जलप्रवाह अन्तःस्थलीय है साथ ही वनस्पति का प्रायः अभाव है और वायु के कार्य अधिक प्रभावकारी है। इन कारणों के फलस्वरूप यहां की मिट्टी अनुपजाऊ है। इस क्षेत्र विशेष की मिट्टी में 95 प्रतिशत तक रेत है। मिट्टी बनने की प्रक्रिया में ये चट्टानी टुकड़े अनेकों स्तरों से गुजरते हैं।

मिट्टी के विभिन्न व्यासों के टुकड़ों में अधिकतर सिलिकन, अल्यूमिनियम व मेगनेशियम का अंश होता है व शनैः शनैः इनमें वनस्पतियों के विभिन्न कण मिलते रहते हैं। वस्तुतः वनस्पति के ये कण ही मिट्टी के उपजाऊपन के कारक होते हैं। साधारणतया मिट्टियों के प्रकार को तीन भागों में बाँटा जाता है - काली, दोमट तथा रेतीली मिट्टी। कुछ विद्वान पथरीली मिट्टी को भी इसका चौथा वर्ग मानते हैं। प्रदेश में ग्राम स्तर पर किये गये मिट्टी के सर्वेक्षणों से यह विदित होता है कि यहां की मिट्टी में एकरूपता नहीं है। राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से देश का दूसरा प्रान्त होने के फलस्वरूप यदि वैज्ञानिक इसकी मिट्टी के संसाधनों का पूर्ण उपयोग करें और उसे संरक्षण प्रदान करें तो यह न केवल प्रदेश के आर्थिक ढांचे को सुदृढ़ करेगा अपितु समस्त देश को खाद्यान्न, चारा व रेशा में आत्मनिर्भरता प्रदान करेगा।

मूलरूप से राजस्थान में पाई जाने वाली मिट्टी को निम्न भागों में बांटा जा सकता है। (1) रेतीली या मरुस्थली (2) लाल व पीली (3) काली (4) दोमट (5) कंछारी या जलोढ़ (6) लाल व काली मिश्रित (7) लेटोराइट। कृषि वैज्ञानिकों ने विभिन्न अध्ययनों व सर्वेक्षणों के आधार पर मिट्टी की गुणवत्ता में वृद्धि हेतु विभिन्न उपाय सुझाये हैं: जैसे मिट्टी में रसायनिक खाद देना, भूक्षरण को रोकने के लिए विभिन्न पेड़ लगाना, अनाधिकृत चराई पर प्रतिबन्ध व वैज्ञानिक कृषि तकनीक को अपनाना व भूमि के लवणीय व क्षारीयकरण को कम करने के लिए अपक्षालन तथा मिट्टी संशोधक तत्वों का उपयोग करना आदि।

वन एवं वनस्पति

राजस्थान जैसे मरुस्थलीय प्रदेश में वन जहां रेगिस्तान के बढ़ते हुए कदमों को रोकते हैं, वहीं प्राकृतिक विपदाओं-आंधी, तूफान व बाढ़ को रोकने का कार्य भी करते हैं। देश के दूसरे सबसे बड़े प्रदेश राजस्थान में वनों के क्षेत्र में निरन्तर कमी आ रही है। 1954-55 में प्रदेश में कुल वन क्षेत्र 41557 वर्ग

किलोमीटर था वह वर्तमान (1988) में घटकर 32293 वर्ग किलोमीटर ही रह गया है जो कि प्रदेश के कुल भू-भाग का मात्र 9.43 प्रतिशत होता है। राजस्थान के कुल वनों का 38 प्रतिशत भाग आरक्षित वन, 51 प्रतिशत रक्षित वन व शेष 11 प्रतिशत अवर्गीकृत वन क्षेत्र है। अरावली पर्वतमाला के उत्तरी व पश्चिम भाग में वर्षा की न्यूनता के फलस्वरूप लगभग एक प्रतिशत भाग में ही वन क्षेत्र पाया जाता है। वर्षा के प्रतिशत के अनुसार प्रदेश के कुल क्षेत्र को शुष्क एवं अर्द्ध-शुष्क क्षेत्र में बांटा जा सकता है। जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर, गंगानगर, जोधपुर, चूरु आदि जिलों में वर्षा कम होने के कारण वन क्षेत्र भी कम है। प्रदेश के ये जिले बालू रेत के टीबों से ढके हुए हैं जहां पेड़ अथवा वनस्पति नगण्य प्राय: ही है। यहाँ कहीं कहीं पर कंटीली झाड़ियाँ अथवा बिना पत्तियों की झाड़ियाँ दिखती भी है तो उनमें दूरी बहुत अधिक होती है।

राजस्थान में उगने वाले वनों को यहां की जलवायु, प्रकृति व जैविक कारकों ने प्रभावित किया है। क्षेत्र की धरातलीय भिन्नता, अलग जलवायु व मिट्टी में विभिन्नता के आधार पर ही यहां की प्राकृतिक वनस्पति का वितरण हुआ है। प्रदेश के किसी क्षेत्र में केवल कंटीली झाड़ियाँ हैं तो कहीं कहीं पर सागवान व बांस के घने जंगल भी हैं। प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र में जहां कि औसत वर्षा 25 सेन्टीमीटर है, कंटीली झाड़ियाँ व घास उत्पन्न होती है। मरुस्थल के इस भाग में मुख्य रूप से रोहिड़ा, खेजड़ी, नीम, कूमट, जाल, सेवण, मूरढ तथा धामण पाई जाती है वहीं राजस्थान के पूर्वी क्षेत्र में जहां की औसत वर्षा 60 से.मी. है, सागवान, बांस, धोकड़ा, कूमट, कंकेडा, महुआ, आम, जामुन, गूलर, सालर, सरेस, बरगद आदि के वृक्ष पाये जाते हैं।

मरुस्थलीय वनों का मुख्य रूप से ईंधन के रूप में उपयोग होता है। साथ ही व्यवसायिक रूप से इमारती लकड़ी, गोंद, बांस, मोम, कत्था, महुआ-आवल व तेन्दू की पत्तियों के रूप में भी उपयोग होता है। भारत का सबसे बड़ा रेगिस्तान थार जहां का अधिकांश भाग बालूमय है, वनस्पति प्राय: कंटीली झाड़ियों के रूप में बहुत दूर दूर पर देखने को मिलती है। इस भाग में एकेसिया ऐरेबिका (Acacia arabica) एकेसिया सेनीगल (Acacia senegal) प्रोसोपिस सिनरेरिया (Prosopis cineraria) प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा (Prosopis juliflora) जीजीपस न्यूमलेरिया (Ziziphus nummularia) सेल्वेडोरा ओलिओडस (Salvadora oleoides) केलिगोनम (Calligonum) आदि वनस्पति मुख्य रूप से पाई जाती है। सभी उगाए गये वृक्षों में प्रोसोपिस जूलीफ्लोरा इस क्षेत्र में सर्वाधिक रूप से सफल हुआ है। यह झाड़ी जहां रेगिस्तान के टीबों में भी उग सकती है वहीं चट्टानों पर भी उत्पन्न हो सकती है। यह वृक्ष (झाड़ी) कम से कम पानी में भी जिन्दा रह सकता है वहीं इसमें पानी व मिट्टी में पाई जाने वाली लवणता को सहन करने की भी शक्ति होती है। राजस्थान में अब तक हुए वानस्पतिक सर्वेक्षण से इस क्षेत्र में पाई जाने वाली 40 वनस्पति की जातियों का पता लगाया जा चुका है। जोधपुर स्थित केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, 'शुष्क वन शोध संस्थान' व भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण विभाग पश्चिमी राजस्थान में पैदा होने वाले वनों, पौधों व झाड़ियों पर विभिन्न शोध कार्य कर रहा है। पिछले कुछ वर्षो से इन संस्थानों में औषधीय पौधों पर भी शोध कार्य किया जा रहा है।

मरुस्थलीय पशु पक्षी

अरावली पर्वतमाला के पश्चिम में जहां कि 'थार रेगिस्तान' आया हुआ है जहां गर्मियों में तापमान 49-50 डिग्री सेल्सियस हो जाता है व धूलभरी आंधियां चलती हैं, फिर भी वर्ष के कुछ भाग में इस क्षेत्र में भी अच्छे पेड़-पौधे, सुन्दर घास व विचित्र प्रकार के पशु-पक्षी दिखाई देते हैं। डॉ.ईश्वर प्रकाश ने लोगों की आम धारणा के विपरीत थार रेगिस्तान को मरुस्थलीय जंगली जानवरों का स्वर्ग कहा है। थार के इस भू-भाग में मरुस्थली जाति की छिपकली प्रमुखता से देखने को मिलती है। रात्रि में जबकि हवा कुछ ठण्डी व नरम हो जाती है, ये छिपकलियां स्वच्छन्दता से घूमना प्रारम्भ कर देते हैं। सवेरे बालू रेत पर इनके चिन्ह सरलता से देखे जा सकते हैं। इस प्रजाति की विशेषता यह है कि

यह अन्य छिपकलियों की तरह रेत में कोई बिल नहीं बनाती अपितु रेत के भीतर पानी की तरह तैरती रहती है और शायद इसीलिये इसे 'रेतीली मछली' की संज्ञा दी गई है। रेगिस्तान के कठोर भूमि वाले क्षेत्र में रीढ़दार पूंछवाली छिपकली पाई जाती है। इस प्रजाति की छिपकली स्वभाव से शाकाहारी होती है व अपना अधिकांश समय एक मुंहवाले 'एल' आकार के बिल में गुजारती है। मादा प्रजाति की यह एकाकी जीवन व्यतीत करने वाली छिपकली एक साथ 8-15 अण्डे देती है। 'साण्डा' जाति की यह छिपकली आदिवासी जन-जातियों के खाने के काम भी आती है। लोगों की ऐसी धारणा है कि इस प्रजाति की छिपकली की चर्बी में असीमित ताकत होती है। वेरेनस ग्रिसीयस (Varanus griseus) पीले रेत के रंग की लम्बे आकार की अन्य छिपकली है जो रेगिस्तान में पाई जाने वाली झाड़ियों में अपना आश्रय खोजती है। यह अपना भोजन थार में पाये जाने वाले अन्य कीड़ों, छिपकलियों, चिड़ियों के अण्डों व चूहों से प्राप्त करती है। मई-अगस्त माह में यह छिपकली 15-30 अण्डे देती है।

साँपों की अनेक प्रजातियां थार में पाई जाती हैं। भाग्यस्वरूप इनकी मात्र तीन जातियां - कोबरा, वाइपर व सिन्दक्रेट (पीवणा) ही जहरीली हैं। कोबरा पूर्ण मरुस्थल की अपेक्षा कस्बों में अधिक पाया जाता है क्योंकि आदतन इसे आद्रता वाले स्थान अधिक पसंद है। 'कोबरा' की तुलना में 'वाइपर' रेगिस्तान में साधारण रूप से पाया जाने वाला सांप है। यह इतना सामान्य रूप से मिलने वाला सांप है कि यदि इस क्षेत्र में 100 सांप एकत्रित किये जाते हैं तो उसमें 50 सांप 'वाइपर' जाति के ही होंगे। इन सांपों की सामान्य लम्बाई 20'' (इन्च) होती है व ये छोटे-छोटे गड्ढों में रहते हैं। बालूरेत (पीला) के रंग का होने के कारण यह आसानी से नजर नहीं आता है। यह सांप अपने पास आने वाले मनुष्य अथवा पशु को अपनी विचित्र प्रकार की आवाज से भी सावधान भी करता है। तीसरे प्रकार 'सिन्दक्रेट' जिसे कि स्थानीय भाषा में 'पीवणा' भी कहते हैं पूर्णत: शुष्क क्षेत्र में पाया जाता है। इस सांप के बारे में ऐसी धारणा है कि यह सोते हुए व्यक्ति के सीने पर बैठकर श्वांस आदान प्रदान की प्रक्रिया से मनुष्य को मार देता है। परन्तु वास्तविकता में ऐसा नहीं है। यह सांप भी अन्य सांपों की तरह ही काटता है व काटने के प्रभाव से ही मनुष्य अथवा पशु मरते हैं।

मरुस्थलीय पर्यावरण में विभिन्न आकार प्रकार के पक्षी पाये जाते हैं। दक्षिण पंजाब व हरियाणा से उत्तर गुजरात व अरावली श्रृंखला के पूर्वतक तीतर व बटेर बहुतायत में पाये जाते हैं। ये सुन्दर से पक्षी मुगलों के समय से ही मानव के खेल के माध्यम रहे हैं और परिणामस्वरूप मरुस्थल में इसकी संख्या में निरन्तर कमी आ रही है। भूमि पर रहने वाला यह सुन्दर भूरे रंग का पक्षी है जो कि बहुत समय तक बिना पानी के रह सकता है। यह तीन से आठ तक के झुंडों में घोंसलें में रहता है। यह पक्षी भेड़-बकरियों के गोबर व खेतों में पड़े हुए बीजों से अपना भरण पोषण कर लेता है। कबूतर के आकार का एक अन्य पक्षी 'चमगादड़' भी राजस्थान में बहुतायत से पाया जाता है। यह पक्षी भी अपना भोजन पेड़ पौधों के बीजों व घास फूस से ही प्राप्त करता है। गर्मियों में यह पक्षी झुण्डों में रहता है व पानी के आसपास इसे आसानी से देखा जा सकता है। वर्षा के उपरान्त इनके झुण्ड छोटे होते जाते हैं। दुर्भाग्य से मरुस्थल के इस पक्षी की संख्या में भी निरन्तर ह्रास हो रहा है और अब इसके एक झुण्ड की संख्या 100 तक भी कठिनाई से पहुंचती है। यद्यपि यह पक्षी बहुत लम्बी दूरी तक आकाश में उड़ सकता है फिर भी इस पक्षी में देशान्तर की प्रवृति नहीं होती।

मरुस्थल के लिये यह अत्यंत गौरव का विषय है कि राष्ट्रीय पक्षी 'मोर' यहां सर्वाधिक रूप से प्राप्त होता है। मोर का प्राचीन काल से ही हमारे धर्मशास्त्रों में विशेष स्थान रहा है। एक ओर जहां इसे कार्तिकेय के वाहन होने का गौरव प्राप्त है तो वहीं भगवान श्री कृष्ण का स्नेह भी इसे प्राप्त है। प्राचीनकाल से ही चूंकि इस पक्षी को संरक्षण प्राप्त है, इसकी संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

समस्त विश्व का ध्यान अपनी तरफ आकर्षित करने वाला पक्षी 'गोडावण' मरुस्थल की ही धरोहर है। यद्यपि सम्पूर्ण विश्व में इसकी संख्या निरन्तर घट रही है परन्तु फिर भी राजस्थान में इसकी उपस्थिति नगण्य नहीं है। थार की जलवायु व प्राकृतिक वातावरण इस पक्षी को यहां रहने के लिये आकर्षित करता है। यह पक्षी भी 2-5 तक के झुण्ड में रहना पसन्द करता है और अपना भरण पोषण यहां प्राप्त होने वाली वनस्पति जिसमें बेर, केर, घास की पत्तियां, छिपकलियां व सांप सम्मिलित हैं, से प्राप्त करता है। मादा पक्षी सामान्यतया एक ही अण्डा देती है परन्तु कभी भी अपने अण्डे की देखरेख नहीं करती।

इनके अतिरिक्त इस क्षेत्र में पाये जाने वाले मुख्य पक्षियों में चील, राजहंस, उल्लू, करज (क्रोंच) व सारस आदि प्रमुख हैं। 'चिंकारा' मरुस्थल में पाया जाने वाला छोटे कद का एक बहुत सुन्दर पशु है। इसके सुन्दर सींग एवं खाल के लिए लोग इसका शिकार करते हैं जिससे मरुस्थल में इसकी संख्या में निरन्तर कमी आ रही है। मादा चिंकारा एक या दो बच्चे देती है जो देखने में बड़े सुन्दर लगते हैं। घास, पत्तियां व फल इसका मुख्य भोजन है। 'कालाहरिण' राजस्थान के पश्चिमी भाग में पाया जाने वाला एक अत्यंत सुन्दर पशु है। इसकी लम्बाई लगभग 70-80 से.मी. व वजन लगभग 40 किग्रा होता है। इस पशु की सुन्दरता इसके सींगों के कारण भी है। जिसकी लम्बाई 50 से 50 सेमी. तक होती है परन्तु मादाओं के अधिकतर सींग नहीं होते। मादा 'काला हरिण' फरवरी-मार्च में एक-दो बच्चों को जन्म देती है। 'काला हरिण' संभवतया अन्य पशुओं की तुलना में सबसे तेज दौड़ने वाला जानवर है जिसकी गति 90 किमी. प्रति घंटा हो सकती है। राजस्थान के 'विश्नोई' इसके प्रमुख आश्रयदाता हैं।

रेगिस्तान में पाये जाने वाले अन्य पशुओं में ''नीलगाय'' का प्रमुख स्थान है। यह भारी-भरकम, ताकतवर, मजबूत कद-काठी वाली पशु है जो अधिकांशत: घने जंगलों में न होकर खेत खलिहानों के निकट 5-15 के झुण्ड में आसानी से देखी जा सकती है। कुछ स्थानों पर ये खड़ी फसलों को बहुत अधिक क्षति पहुंचाते हैं।

अकाल

अकाल एवं सूखा मरुस्थल के पर्याय से हैं। मरुस्थल में प्राय: वर्षा की अत्यल्पता एवं अनिश्चितता रहती है फलस्वरूप इस क्षेत्र का अकाल की चपेट में आना आम बात है। रेगिस्तान में वर्षा की कमी के कारण बार-बार पड़ने वाले अकाल के सम्बन्ध में निम्न दोहा प्रसिद्ध है:

पग पूंगल धिड़ मेहता, उदरज बीकानेर।
भूलौ चूकौ जोधपुर, ठावो जैसलमेर।।

थार मरुस्थल में अनेक स्थान ऐसे हैं जहां वर्षा न होने से खेतीबाड़ी तो दूर रही, पीने को पानी तक नहीं मिलता। वर्षा का न होना यहां आश्चर्य न होकर वर्षा का होना आश्चर्य की बात है। यहां एक कहावत यह भी प्रसिद्ध है 'तीजो कुरियों, आंठवो काल' अर्थात् यहां हर तीसरे वर्ष 'अर्द्ध अकाल' व हर आंठवे वर्ष पूर्ण अकाल पड़ता है। रेगिस्तान में पड़ने वाले अकाल को तीन श्रेणियों में बांटा गया है- (1) अन्नकाल:- जब कृषि उपज न हो (2) जलकाल:- जब वर्षा बिल्कुल न हो (3) तृणकाल:- जब पशुओं के लिए घास व चारा भी पैदा न हो और जिस समय उपरोक्त तीनों परिस्थितियाँ शामिल हो जाय तो ऐसे समय में पड़ने वाले अकाल को 'त्रिकाल' की संज्ञा दी जाती है। सन् 1987 में राजस्थान में ऐसा ही त्रिकाल पड़ा था। रेगिस्तान में सबसे भीषण व बड़ा अकाल 11वीं सदी में पड़ा जब यहाँ लगातार 12 वर्षों तक वर्षा नहीं हुई। संवत् 1348 व 1392 में यहां फिर ऐसे ही भीषण अकाल पड़े जब लोगों ने पशुओं के मांस को खाकर अपना जीवनयापन किया। राजस्थान में पड़ने वाले अकालों में जन व धन की अपार क्षति होती है। अनेकों बार तो ऐसे अवसर भी आते हैं जब अकाल में यहां के लोग पशुओं की तरह अपने बच्चों तक को बेच देते हैं। यद्यपि प्रदेश में अब तक अनेकों भीषण अकाल पड़े हैं परन्तु 'छपन्ना' (वि.सं.1956) में पड़े अकाल की बात

याद करके अभी-भी लोगों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। थार में पड़ने वाले इस अकाल ने राजस्थान के जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, उदयपुर (मेवाड़), टोंक, जयपुर व अजमेर आदि जिलों को अपनी चपेट में ले लिया था। एक मोटे अनुमान के अनुसार इस अकाल में मरने वालों की संख्या लगभग 10 लाख थी। 20वीं शताब्दी में हुई तकनीकी प्रगति संचार एवं आवागमन के साधनों में हुए विकास के परिणामस्वरूप यद्यपि अकालों की संख्या में कोई कमी नहीं आई है तथापि अकाल से मरने वाले मनुष्यों की संख्या में कमी अवश्य आई है।

पर्यावरण पर उपलब्ध नवीनतम प्रकाशन

कोली, हरिनारायण	पर्यावरण एवं मानव संसाधन	पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर-302003 (राज.)	(1996)
चन्दोला, प्रेमानन्द	पर्यावरण और जीव।	दिल्ली: हिमाचल पुस्तक भण्डार, सरस्वती भंडार, गांधीनगर, दिल्ली-110031	(1994)
मिश्र, शिवगोपाल	जल प्रदूषण	'ज्ञान गंगा', 205-सी, चावड़ी बाजार, दिल्ली-110006	(1997)
मिश्र, शिवगोपाल	मृदा प्रदूषण	'ज्ञान गंगा', 205-सी, चावड़ी बाजार, दिल्ली-110006	(1994)

BOOK POST

ENVIS CENTRE ON DESERTIFICATION
Dr. RAHEJA LIBRARY
CENTRAL ARID ZONE RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR - 342 003, INDIA
Editorial Assistance : D.V. Kothari, *Sr. Tech Officer*

Vinay, Ju. © 640481

आपके महत्वपूर्ण सुझाव एवं मरुस्थलीय सूचनाएं आमंत्रित हैं।